# इकाई 36 साम्प्रदायिकता और भारत का विभाजन

## इकाई की रूपरेखा



## 36.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- ब्रिटिश शासन के अंतिम दशक में साम्प्रदायिकता की प्रकृति को व्याख्यायित कर सकेंगे,
- पाकिस्तान की मांग की पृष्ठभूमि की जानकारी दे सकेंगे,
- भारत के विभाजन से संबंधित राजनीतिक गतिविधियों को पहचान सकेंगे, और
- पाकिस्तान के निर्माण में अंग्रेज़ी, लीग और कांग्रेस की भूमिका का मूल्यांकन कर सकेंगे।

## 36.1 प्रस्तावना

खंड IV की इकाई 14 में आपने उन विभिन्न शक्तियों की जानकारी प्राप्त की जिसके कारण आधुनिक भारत में साम्प्रदायिकता का जन्म और विकास हुआ। आपने 1940 ई. तक की साम्प्रदायिकता से संबंधित प्रमुख गतिविधियों की जानकारी पहले ही प्राप्त कर ली है। वस्तुतः 1940 का दशक साम्प्रदायिकता का सबसे संकटकालीन और निर्णायक चरण था। इसी काल में पाकिस्तान की माँग को सामने रखा गया और प्रचारित किया गया। इसी दशक (1947) में पाकिस्तान का निर्माण भी हुआ। इस इकाई में इस बात का प्रयत्न किया गया है कि आप पाकिस्तान बनने की प्रक्रिया से परिचित हो सकें। साथ ही साथ इससे जुड़ी प्रमुख घटनाओं से आपका साक्षात्कार कराया जाएगा।

## 36.2 पाकिस्तान बनने की पृष्ठभूमि

पाकिस्तान की मांग एकाएक सामने नहीं आयी। 1937 के बाद राजनीतिक गतिविधियों ने कुछ इस प्रकार का रुख लिया जिससे शनैः शनैः पाकिस्तान की मांग जोर पकड़ती गयी। 1937 के बाद हिंदू और मुस्लिम साम्प्रदायिक शक्तियों की राजनीति में गंभीर परिवर्तन हुए। पाकिस्तान की मांग को स्वीकार कर और बढ़ावा देकर अंग्रेज़ों ने आग में घी डालने का काम किया।

### 36.2.1 मुस्लिम लीग के स्वरूप में परिवर्तन

1937 में मुस्लिम साम्प्रदायिकता ने एक नया लख अख्तियार किया। 1937 में प्रांतीय विधान सभाओं के लिए हुए चुनाव में मुस्लिम लीग मुसलमानों के लिए आरक्षित 492 सीटों में से मात्र 109 सीटों पर ही विजय प्राप्त कर सकी अर्थात् उसे कुल मुस्लिम वोट का मात्र 4.8 प्रतिशत ही प्राप्त हुआ। चुनाव के इस नतीजे से लीग के सामने यह स्पष्ट हो गया कि उसे अपना प्रभाव मुस्लिम जनता, ख़ासकर शहर में रहने वाले निम्न मध्यवर्गीय मुसलमानों के बीच बढ़ाना होगा। चूँकि लीग का मौजूदा सामाजिक आधार भूमिपतियों और वफ़ादार लोगों तक ही सीमित था, अतः इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक सुधारवादी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कार्यक्रम की बात सोची नहीं जा सकती थी। अतः लीग ने "इस्लाम ख़तरे में है" का नारा दिया और हिंदू राज की आशंका से मुसलमानों को भयभीत किया। बहुत जल्द ही एक धर्म को ख़तरे से बचाने का नारा दूसरे धर्म अनुयायियों के प्रति विद्वेष में बदल गया। डब्ल्यू. सी. स्मिथ के अनुसार साम्प्रदायिक दुष्प्रचार "धर्मोत्साह, आतंक, तिरस्कार और घृणा" से परिपूर्ण था। जिन्ना और अन्य लीग के नेताओं ने ऐलान कर दिया कि कांग्रेस का उद्देश्य स्वतंत्रता प्राप्ति नहीं बल्कि हिंदू राज्य की स्थापना है। उनके अनुसार कांग्रेस का मूल उद्देश्य मुस्लिमों पर आधिपत्य स्थापित करना है और उनके धार्मिक विश्वास पर कुठाराघात करना है। एक बार मुसलमानों के मन में हिंदू राज्य का भय बैठा देने के बाद लीग के नेताओं के लिए ऐसे राष्ट्र की मांग काफ़ी आसान हो गयी, जिसमें मुसलमान स्वतंत्रता से जी सकें और अपने धार्मिक विश्वास की रक्षा कर सकें। 1937 के बाद की लीग की इस घृणा और भय फैलाने की नीति के फलस्वरूप पाकिस्तान की माँग सामने आयी। मार्च 1940 के लाहौर अधिवेशन में लीग ने प्रसिद्ध लाहौर प्रस्ताव जारी किया और इसमें मुसलमानों के लिए इस आधार पर अलग संप्रभु राज्य की मांग की कि "हिंदू" और "मुसलमान" दो अलग राष्ट्र हैं।

### 36.2.2 हिंदू साम्प्रदायिकता का उग्रवादी चरण

1937 के चुनाव में हिन्दू सम्प्रदायवादियों की स्थिति मुस्लिम सम्प्रदायवादियों की तुलना में बहुत खराब रही। अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए अब उनके सामने एक ही रास्ता बचा कि वे जनता का सहयोग प्राप्त करें। उनकी स्थिति तब और नाज़ुक हो गयी जब 1938 में कांग्रेस ने सम्प्रदायवादियों को अपने संगठन से अलग-अलग कर दिया। अब हिन्दू सम्प्रदायवादियों को नये आधार और नये कार्यक्रम की ज़रूरत थी। इसके लिए उन्होंने धर्म का सहारा लिया और मुस्लिम लीग की तरह उन्होंने घृणा और भय का प्रचार किया। मदन मोहन मालवीय के स्थान पर हिन्दू महासभा के वी. डी. सावरकर और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के एम.एस. गोलवलकर नये नेता के रूप में सामने आये, जिन्होंने अपने संगठनों को फासिस्ट स्वरूप प्रदान किया। गोलवलकर की पुस्तक "हम" हिन्दू सम्प्रदायवाद का घोषणा पत्र बना। इसमें मुसलमानों की निन्दा की गयी और कांग्रेसियों की यह कहकर आलोचना की गयी कि "ये हमारे कट्टर शत्रु" का समर्थन कर रहे हैं। इस पुस्तक में यह भी कहा गया कि मुसलमान भारत में तभी रह सकते हैं जब वे अपने को विदेशी मानना छोड़ दें और हिन्दू बन जायें, अन्यथा उन्हें कोई विशेषाधिकार या अल्पसंख्यक होने की विशेष सुविधा तो नहीं ही मिलेगी और न नागरिक अधिकार ही प्रदान किये जायेंगे। उन्होंने भारत को हिन्दू राष्ट्र बनाने की घोषणा की और मुसलमानों से कहा कि या तो वे यह देश छोड़ दें या दूसरी श्रेणी के नागरिक बनकर रहने के लिए तैयार हो जायें। इस प्रकार हिन्दू संप्रदायवादियों ने दो राष्ट्र के सिद्धांत को स्वीकार किया और पृथक राष्ट्र की माँग को दृढ़ बनाया।

1946-47 तक हिन्दू संप्रदायवादियों का स्वर काफी द्वेषपूर्ण हो गया। दंगों के भड़कने और कांग्रेस द्वारा उन्हें रोकने में असफलता के कारण हिन्दू सम्प्रदायवादियों का प्रभाव काफ़ी तेज़ी से बढ़ा। इसका सबसे बड़ा कारण यह था कि उन्होंने अपने को हिन्दुओं का रक्षक कहा। उन्होंने कांग्रेसी नेताओं पर यह आरोप लगाया कि वे अहिंसा और साम्प्रदायिक एकता पर बल देकर हिन्दुओं को कमज़ोर बना रहे हैं। हिन्दू सम्प्रदायवादियों ने हिन्दुओं से अपील की कि वे मुसलमानों से बदला लें और उन्हें सबक सिखायें। विभाजन के बाद उनकी स्थिति और मज़बूत हो गयी क्योंकि साम्प्रदायिक विद्वेष के वातावरण में उन्हें फलने-फूलने का अच्छा मौका मिला। उन्होंने मांग की कि पाकिस्तान एक इस्लामी राज्य है, अतः भारत को भी एक हिन्दू राज्य घोषित करना चाहिए। जब दंगों के ज़रिये अव्यवस्था फैला कर सरकार को उखाड़ फेंकने में वे असफल रहे तब वे हिन्दू सम्प्रदायवादी नेताओं पर आक्षेप लगाने लगे। यहां तक कि गाँधी जी को भी नहीं बख्शा गया, क्योंकि मुसलमानों और पाकिस्तान के प्रति उनका रवैया नरमी का था। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और महासभा की गोष्ठियों में गांधी जी की हत्या का आह्वान किया गया और 30 जनवरी 1948 को महासभा के एक सदस्य ने महात्मा गांधी की हत्या कर दी। गांधी जी की हत्या से यह सिद्ध होता है कि साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक शक्तियां अपने उग्रवादी चरण में पहुँच चुकी थीं। साम्प्रदायिकता के इसी रुख के कारण पाकिस्तान के निर्माण के लिए अनुकूल वातावरण तैयार हुआ। गांधी जी की हत्या इसी उग्रवादी साम्प्रदायिकता का एक दुखद परिणाम थी।

## 36.2.3 ब्रिटिश नीति

मुस्लिम साम्प्रदायिकता को भड़काने में अंग्रेज़ सरकार की महत्वपूर्ण भूमिका थी। अंग्रेज़ों ने मुस्लिम सम्प्रदायवादियों की खुलेआम सरकारी सहायता की। उनकी फूट डालो और शासन करो की नीति ने 1937 तक हिन्दू और मुसलमानों के बीच कभी न पाटी जाने वाली खाई खोद डाली। हिंदुस्तानियों को विभाजित करने की दूसरे प्रकार की कोशिशें नाकाम हो चुकी थीं। इसके पहले उपनिवेशवादी शक्तियों ने राष्ट्रीय आंदोलनों के खिलाफ भूमिपतियों तथा पिछड़ी और अनुसूचित जातियों को खड़ा करने की कोशिश की। उन्होंने कांग्रेस के वामपंथी और दक्षिण पंथी दलों को विभक्त करने की भी कोशिश की थी, पर उन्हें कोई सफलता नहीं मिली। 1937 के चुनाव के बाद यह स्पष्ट हो गया कि अंग्रेज़ सरकार के पास साम्प्रदायिकता का ही एक रास्ता बच गया था जिसके माध्यम से हिंदुस्तानियों को विभाजित किया जा सकता था।

द्वितीय विश्वयुद्ध छिड़ने के बाद वाइसरॉय लिनलिथगो ने प्रयत्नपूर्वक मुस्लिम लीग को प्रोत्साहित किया। काँग्रेस इस बात पर अड़ी थी कि विश्वयुद्ध के बाद अंग्रेज़ों को भारत छोड़ देना होगा। लेकिन युद्ध से पहले ही सत्ता हिंदुस्तानियों के हाथ में सौंप दी जानी चाहिए। अंग्रेज़ी शासन ने यह तर्क दिया कि पहले हिन्दू और मुस्लिम हस्तांतरण की प्रक्रिया पर सहमत हो जायें तभी बात आगे बढ़ सकती है। सरकारी तौर पर लीग को मुस्लिम हित के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार किया गया। (हालांकि पिछले चुनाव का परिणाम मुस्लिम लीग के इस दावे से मेल नहीं खाता था) और अंग्रेज़ों ने उनसे यह भी वादा किया कि बिना लीग की सहमति से कोई भी राजनीतिक समझौता नहीं किया जायेगा। इस प्रकार लीग को ऐसी वीटो शक्ति प्राप्त हुई जिसका उपयोग जिन्ना ने युद्ध की समाप्ति के बाद किया।

### क्रिप्स मिशन—मार्च-अप्रैल, 1942

मार्च 1942 में स्टैफोर्ड क्रिप्स (यह लेबर पार्टी का नेता था जिसके बहुत से कांग्रेसी नेताओं के साथ दोस्ताना संबंध थे।) के नेतृत्व में एक आयोग भारत पहुँचा। प्रकट रूप में जिसका उद्देश्य था जल्द से जल्द भारत में स्वशासी सरकार की स्थापना, पर क्रिप्स ने जिन प्रावधानों की घोषणा की, उससे काफ़ी निराशा उत्पन्न हुई। इसमें पूर्ण स्वतंत्रता देने की बात नहीं की गई थी बल्कि भारत को और वह भी युद्ध के बाद डॉमिनियन स्टेटस का दर्जा देने की बात की गयी। और इसमें प्रस्तावित संविधान सभा के निर्माण का प्रावधान था जिसमें भारतीय रजवाड़ों का प्रतिनिधित्व राजाओं के प्रतिनिधियों द्वारा होना था। इसमें यह बिल्कुल स्पष्ट था कि नये कार्यकारिणी परिषद में नियंत्रण पूरी तरह अंग्रेज़ शासकों के

अधीन रहना था। कांग्रेस ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। एमरी, जो भारत में सचिव थे, ने इस प्रस्ताव को रूढ़िवादी, प्रतिक्रियावादी और संकुचित कहा। लेकिन क्रिप्स प्रस्ताव ने अप्रत्यक्ष रूप से पाकिस्तान बनने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। इसमें एक धारा थी जिसे "लोकल आप्शन" (स्थानीय विकल्प) के रूप में जाना जाता है। इसके अनुसार प्रांतों को यह अधिकार दिया गया कि भविष्य में अपनी स्थिति निर्धारित करने के लिए ब्रिटेन से सीधा समझौता कर सकते हैं और इसके साथ ही साथ भविष्य में बनने वाले नये संविधान को अस्वीकार भी कर सकते हैं।

हालाँकि क्रिप्स मिशन असफल रहा लेकिन इसने मुस्लिम लीग को एक तरह से प्रोत्साहित किया। प्रांतीय स्वायत्तता के प्रावधान ने पाकिस्तान बनने की माँग को वैधानिक रूप प्रदान किया। जिस समय भारतीयों द्वारा इस समस्या को बहुत हल्के ढंग से लिया जा रहा था उस समय पाकिस्तान बनाने की माँग को सरकारी तंत्र ने काफ़ी तेज़ी से प्रोत्साहित किया।

**बोध प्रश्न 1**

1 मुस्लिम लीग ने "इस्लाम खतरे में है" का नारा क्यों दिया? (उत्तर दस पंक्तियों में दीजिए)

..........................................................................................................
..........................................................................................................
..........................................................................................................
..........................................................................................................
..........................................................................................................
..........................................................................................................
..........................................................................................................
..........................................................................................................
..........................................................................................................
..........................................................................................................

2 निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़िए और सही ( ✓ ) गलत ( × ) चिह्न लगाइए।

i) 1937-38 के बाद हिन्दू सम्प्रदायवाद ने फासीवादी रुख़ अपनाया। ☐

ii) पाकिस्तान बनने की प्रक्रिया में क्रिप्स प्रस्ताव मील का पत्थर साबित हुआ। ☐

iii) 1942 के बाद अंग्रेज़ सरकार ने मुस्लिम साम्प्रदायिकता के प्रसार को रोकने की कोशिश की। ☐

## 36.3 द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की परिस्थितियां

इस भाग में हम द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से लेकर पाकिस्तान बनने तक की घटनाओं का क्रमबद्ध विवरण आपके सामने प्रस्तुत करने जा रहे हैं। दो वर्ष की इस अवधि के दौरान जो घटनाएं घटीं उनसे भारत के विभाजन और पाकिस्तान के निर्माण में काफ़ी सहायता मिली।

### 36.3.1 शिमला कांफ्रेंस और चुनाव

द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद वाइसरॉय वैवेल ने जून 1945 के मध्य में कांग्रेसी नेताओं को जेल से रिहा कर दिया। उन्हें अंतरिम समझौते के लिए शिमला में आमंत्रित किया। इस कांफ्रेंस में इस बात पर विचार होना था कि भारतीय किस तरह अपने देश पर

शासन करेंगे। कांग्रेस सहयोग के लिए तैयार थी और उसने अपन प्रतिनिधियों की सूची भी भेज दी। लेकिन जिन्ना अंग्रेज़ों द्वारा प्रदत्त अपनी वीटो शक्ति को आज़माना चाहते थे। उन्होंने ज़ोर दिया कि कार्यकारिणी परिषद् में मुसलमानों को नामज़द करने का अधिकार केवल लीग को ही है। सरकार मुस्लिम लीग के इस दावे के कारण धर्म संकट में पड़ गयी क्योंकि इसमें पंजाब के उन यूनियनिस्ट पार्टी के मुसलमानों को प्रतिनिधित्व नहीं मिल पा रहा था जिन्होंने युद्ध के दौरान अंग्रेज़ों की दृढ़तापूर्वक सहायता की थी। लेकिन वैवेल ने अतीत की वफ़ादारी की अपेक्षा वर्तमान और भविष्य के हितों को अधिक महत्व दिया और उसने मुस्लिम लीग की मांग को अस्वीकार करने के बजाय कांफ्रेंस को भंग करने की घोषणा कर दी। जिन्ना की वीटो शक्ति कामयाब हुई।

19. शिमला में नेहरू और जिन्ना

### चुनाव-अंतिम हथियार

केन्द्रीय और प्रांतीय विधान सभाओं के चुनावों में लीग ने सीधा साम्प्रदायिक नारा दिया—"लीग और पाकिस्तान के लिए वोट देने का मतलब है इस्लाम के लिए वोट देना।" चुनाव की सभाओं के लिए मस्जिदों का उपयोग किया गया और पीरों से यह अनुरोध किया गया कि वे यह फ़तवा जारी करें कि मुसलमान लीग को ही वोट दें। मुस्लिम जनता से यह कहा गया कि कांग्रेस और लीग में से किसी एक को चुनने का मतलब है **गीता** और **क़ुरान** में से किसी एक को चुनना। इस साम्प्रदायिक माहौल में अगर लीग ने सभी मुस्लिम सीटों पर विजय प्राप्त की तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

## 36.3.2 कैबिनेट मिशन

1946 के आरंभ में अंग्रेज़ अधिकारी पूरी तरह समझ गये थे कि अब उनके लिए यही

अच्छा होगा कि वे सम्मानजनक ढंग से भारत से लौट जायें। मार्च 1946 में कैबिनेट मिशन भारत भेजा गया। इसका उद्देश्य एक राष्ट्रीय सरकार की स्थापना करना और सत्ता हस्तांतरण की संवैधानिक व्यवस्था को खोजना था। जब अंग्रेज़ों ने भारत छोड़ने का निर्णय लिया तो यह विश्वास किया गया कि फूट डालो और राज करो की पुरानी नीति अब नहीं चल सकती। इसके पक्ष में यह तर्क भी सामने रखा गया कि स्वतंत्रता के बाद एकीकृत भारत ब्रिटेन के हक में लाभप्रद होगा। इस तर्क के पीछे यह विश्वास भी निहित था कि एकीकृत भारत की सैन्य शक्ति राष्ट्रमंडल (कामनवेल्थ) की प्रतिरक्षा की सक्रिय सहयोगी बन सकेगी और यदि भारत और पाकिस्तान का बँटवारा हो गया तो भारत की सैन्य शक्ति दुर्बल हो जायेगी। भारत पाकिस्तान के आपसी झगड़े से राष्ट्रमंडल (कॉमनवेल्थ) की शक्ति भी कमज़ोर होगी। इस नीति परिवर्तन के कारण कांग्रेस और लीग के प्रति अंग्रेज़ों का रवैया बदल गया। ब्रिटेन के प्रधानमंत्री एटली ने 15 मार्च 1946 को घोषणा की कि "बहुसंख्यक के निर्णय पर अल्पसंख्यकों को वीटो लगाने का अधिकार नहीं दिया जायेगा।" यह नीति जून 1945 की शिमला कांफ्रेंस के समय वाइसरॉय वैवेल की नीति से बिल्कुल विपरीत थी, शिमला कांफ्रेंस में जिन्ना ने मुसलमानों को नामज़द करने के एकाधिकार का दावा किया। जिन्ना की मांग रद्द कर दी गयी और कांफ्रेंस भंग कर दी गयी थी। कैबिनेट मिशन का यह भी विश्वास था कि पाकिस्तान का कोई अलग अस्तित्व नहीं है इसलिए मिशन ने जो योजना बनायी उसके अंतर्गत देश की एकता को ध्यान में रखते हुए मुस्लिम अल्पसंख्यक के हितों की रक्षा की बात की गयी। संविधान के स्वरूप निर्धारण के लिए कार्यकारी दल को तीन भागों में विभाजित किया गया। मद्रास, बंबई, संयुक्त प्रान्त, बिहार, मध्य प्रांत और उड़ीसा को समूह "क" में रखा गया। पंजाब, उत्तर पश्चिम सीमांत प्रदेश और सिन्ध को समूह "ख" में रखा गया और समूह "ग" का निर्माण आसाम और बंगाल को मिलाकर हुआ। प्रतिरक्षा, विदेशी मामलों और संचार को केंद्र के अधीन रखा गया। प्रथम आम चुनाव के बाद कोई प्रांत अपने समूह को छोड़ सकता था और 10 वर्ष के बाद समूह और केन्द्रीय संविधान में परिवर्तन की मांग कर सकता था।

**समूहीकरण की नीति में अस्पष्टता**

समूहीकरण के मसले पर कांग्रेस और लीग के बीच मतभेद हो गया। कांग्रेस की यह मांग थी कि प्रांतों के पास यह विकल्प होना चाहिए कि आरंभ में यदि वे न चाहे तो किसी समूह विशेष में शामिल न हों। आम चुनावों तक इस निर्णय के लिए इंतज़ार करना उचित नहीं है। कांग्रेस के इस विरोध का कारण यह था कि आसाम और उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रदेश को समूह "ग" और "ख" में रखा गया था। जबकि दोनों प्रांतों में कांग्रेस की सरकार थी। लीग ने यह मांग की कि प्रांतों को केन्द्रीय संविधान में तुरंत परिवर्तन करने का अधिकार दिया जाये। इसके लिए आगे 10 वर्षों तक इंतज़ार करना ठीक नहीं। आधारभूत समस्या यह थी कि कैबिनेट मिशन प्लान में यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया था कि समूहीकरण अनिवार्य था या वैकल्पिक। वस्तुतः जब कैबिनेट मिशन से स्पष्टीकरण मांगा गया तो उसने ऐसा करने से इंकार कर दिया। कैबिनेट मिशन का यह विश्वास था कि इस अस्पष्टता की नीति से कांग्रेस और लीग की परस्पर विरोधी स्थिति में सामंजस्य स्थापित हो जायेगा : पर इससे मामला और उलझता गया।

इस अस्पष्टता के कारण स्वाभाविक रूप से लीग और कांग्रेस अपने फायदे के हिसाब से प्लान की व्याख्या करने लगे। सरदार पटेल यह निष्कर्ष निकालकर खुश हो रहे थे कि अब पाकिस्तान का मामला समाप्त हो चुका है और लीग की वीटो शक्ति वापस ले ली गयी है। 6 जून, 1946 को अपने वक्तव्य में लीग ने यह स्पष्ट कर दिया कि उसने प्लान को इसी कारण स्वीकार किया है क्योंकि इसमें अनिवार्य समूहीकरण की बात की गयी है जो पाकिस्तान निर्माण का आधार है। 7 जून, 1946 को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी को नेहरू जी ने संबोधित करते हुए कहा कि कांग्रेस संविधान सभा में सम्मिलित होगी। एक संप्रभु निकाय होने के कारण विधान सभा केवल कार्यप्रणाली के नियमों को सूत्रबद्ध करेगी। यह समझा जा रहा था कि मिशन द्वारा बनाये गये नियमों को संशोधित किया जा सकता है। नेहरू के भाषण का तत्काल लाभ उठाकर 29 जुलाई 1946 को लीग ने केबिनेट मिशन प्लान को अस्वीकार कर दिया।

### 36.3.3 अंतरिम सरकार की स्थापना

अंग्रेज सरकार इस दुविधा में पड़ गयी कि वह लीग के सम्मिलित होने का इंतज़ार करे या योजना को कामचलाऊ रूप से कार्यान्वित करे और केवल कांग्रेस के साथ अंतरिम सरकार की स्थापना करे। वैवेल लीग को साथ लेकर चलना चाहते थे, पर ब्रिटेन की सरकार कांग्रेस को साथ लेकर चलने के पक्ष में थी। ब्रिटेन की सरकार को यह विश्वास था कि कांग्रेस के साथ सहयोग, आने वाले समय के लिए हितकारी होगा। इस नीति के तहत कांग्रेस को अंतरिम सरकार बनाने का निमंत्रण मिला। 2 सितम्बर, 1946 को जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में अंतरिम सरकार का गठन हुआ। जिन्ना और लीग को नज़रअंदाज़ करते हुए अंतरिम सरकार की स्थापना ब्रिटिश नीति में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का संकेत करती है। पहली बार जिन्ना के इस दावे को अंग्रेज़ों ने नज़रअंदाज़ कर दिया कि लीग की सहमति के बगैर कोई संवैधानिक समझौता नहीं किया जा सकता है।
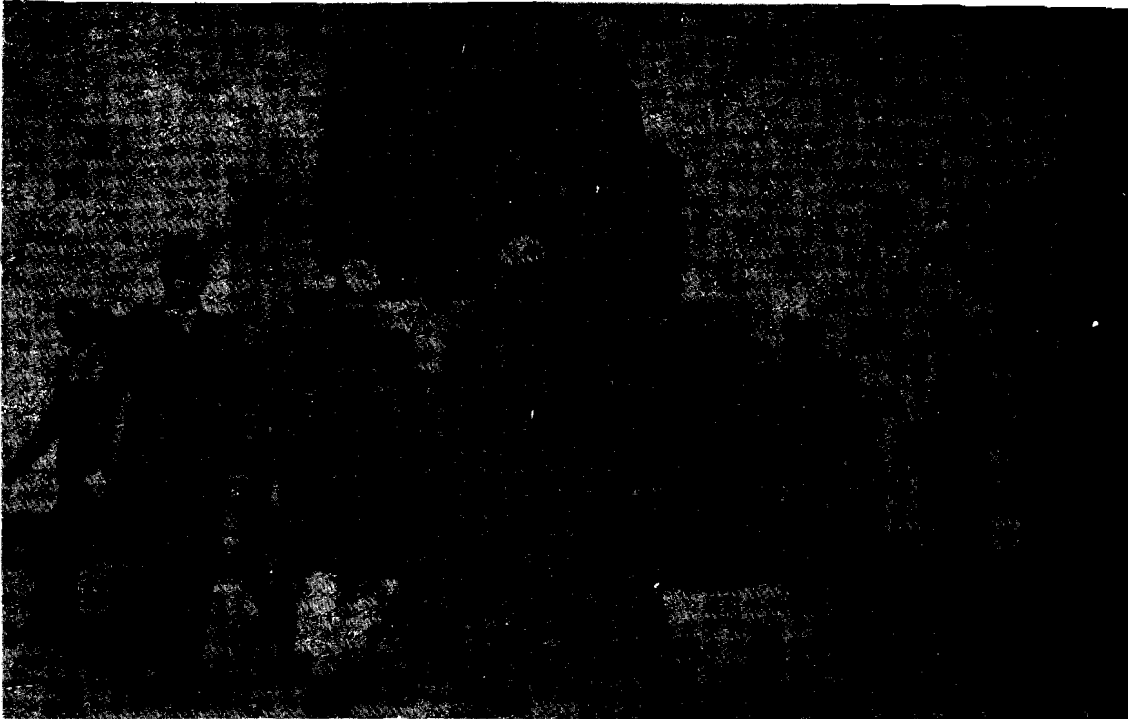
**20. अंतरिम सरकार के सदस्य**

**लीग द्वारा प्रत्यक्ष कार्रवाई**

हालांकि जिन्ना को विश्वास था कि अंग्रेज़ अपनी पुरानी नीति का अनुसरण करेंगे। उन्होंने ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली को चेतावनी दी कि यदि अंग्रेज़ कांग्रेस के समक्ष घुटने टेकते हैं और उन्हें अहमियत देते हैं, तो मुसलमान संघर्ष करने के लिए बाध्य हो जायेंगे। यह कोई ख़ाली धमकी नहीं थी क्योंकि लीग ने प्रत्यक्ष कार्रवाई की योजना अब तक बना ली थी। 16 अगस्त 1946 को कलकत्ता में प्रत्यक्ष कार्रवाई का आह्वान किया गया और एक नया नारा लगाया गया। "लड़कर लेंगे पाकिस्तान" इस साम्प्रदायिक आग को मुसलमान साम्प्रदायिक दलों ने हवा दी। इस समय बंगाल में सुहरावर्दी के नेतृत्व में लीग का मंत्रीमंडल था। उन्होंने प्रत्यक्ष रूप में तो नहीं लेकिन इस मामलें से उदासीन रहकर सम्प्रदायिक वातावरण को बिगड़ने का मौक़ा दिया। इससे हिन्दू सम्प्रदायवादी तत्त्वों में प्रतिक्रिया हुई, दंगें हुए और पाँच हज़ार लोग मारे गये। इसे कलकत्ते के नरसंहार के नाम से जाना जाता है। अक्तूबर 1946 के आरंभ में पूर्वी बंगाल के नोआखली में गड़बड़ी पैदा हुई और प्रतिक्रिया स्वरूप अक्तूबर, 1946 के अंत में बिहार में मुसलमानों पर हमला किया गया। आने वाले महीनों में संयुक्त प्रांत, बम्बई और उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रांत में दंगे हुए। इस साम्प्रदायिक आंधी को रोका नहीं जा सका।

अंग्रेज़ों द्वारा लीग से समझौता

इस कत्लेआम को जिन्ना रोक सकते थे। अतः अंग्रेज़ अधिकारियों ने मुसलमानों को प्रसन्न करने की अपनी पुरानी नीति को फिर से अपनाया। वे यह जानते थे कि लीग उन्हीं का बनाया हुआ है पर अब उसका स्वरूप इतना घातक हो गया है कि उसे वश में नहीं किया जा सकता। वैवेल लगातार कोशिश कर रहे थे कि लीग को सरकार में शामिल किया जाये। इसी समय भारत सचिव (सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट) पैथिक लारेंस ने उनका समर्थन किया। लारेंस का कहना था कि यदि लीग को शामिल नहीं किया गया तो गृह युद्ध अवश्यम्भावी होगा। इस प्रकार 26 अक्तूबर, 1946 को लीग अंतरिम सरकार में शामिल हुई।

### अंतरिम सरकार : संघर्ष का दूसरा दौर

अंतरिम सरकार में लीग के शामिल होने से झगड़ा समाप्त नहीं हुआ बल्कि इससे संघर्ष का एक नया क्षेत्र खुल गया, लीग को अंतरिम सरकार में शामिल होने के लिए पाकिस्तान या सीधी कार्रवाई का त्याग करने की शर्त नहीं थी। इसके अतिरिक्त उन्होंने कैबिनेट मिशन प्लान के अल्पावधि और दीर्घावधि पहलुओं को स्वीकार नहीं किया था। लीग के नेताओं और खासकर जिन्ना ने खुले आम यह घोषणा की कि अंतरिम सरकार अन्य तरीकों से गृह युद्ध जारी रखने का केवल एक माध्यम है। जिन्ना यह सोचते थे कि प्रशासन पर कांग्रेस का नियंत्रण लीग के हित में नहीं है और इसी कारण वे चाहते थे कि लीग को भी सत्ता में हिस्सा मिले। अंतरिम सरकार को उन्होंने एक ऐसे आधार के रूप में देखा जिसके सहारे लीग को पाकिस्तान के निर्माण में मदद मिल सकती थी।

अंतरिम सरकार में कांग्रेस और लीग के सदस्यों के बीच मतभेद तुरंत उभरकर सामने आ गये। लियाक़त अली ख़ान के अलावा लीग ने अंतरिम सरकार में प्रतिनिधि के रूप में अपने दूसरे दर्जे के नेताओं (लियाक़त अली ख़ान को छोड़कर) को भेजा इससे उनका मन्तव्य साफ हो गया कि वे सरकार चलाने में कांग्रेस के साथ भागीदारी नहीं करना चाहते। दूसरी तरफ यह मंशा भी स्पष्ट हो गयी कि दोनों के बीच सहयोग असंभव हैं। लीग के मंत्रियों ने अपना एक सिद्धांत सा बना लिया था कि कांग्रेसी मंत्रियों द्वारा लिये गये किसी भी निर्णय का विरोध किया जाये। कार्यकारिणी परिषद के पहले होने वाली तैयारी की बैठकों में लीग नेताओं ने कभी हिस्सा नहीं लिया, जिसमें कांग्रेसी सदस्य एक आम निर्णय लेते थे ताकि वैवेल की नीति सफल न हो सके।

### अंतरिम सरकार टूटने के कगार पर

कांग्रेसी नेताओं ने आरम्भ में ही लीग के नेताओं को शामिल किये जाने पर असहमति व्यक्त की। उनका कहना था कि कैबिनेट मिशन प्लान को स्वीकार किये बिना लीग को अंतरिम सरकार में शामिल नहीं किया जाना चाहिए। बाद में जब सरकार के अन्दर और बाहर लीग की असहयोग नीति स्पष्ट हो गयी तब कांग्रेसी सदस्यों ने यह मांग की कि लीग या तो प्रत्यक्ष कार्रवाई को बन्द करे या सरकार छोड़ दे । हाँलाकि 6 दिसम्बर 1946 को ब्रिटिश सम्राट ने लीग के समूहीकरण पर दृढ़ बने रहने का समर्थन किया था फिर भी 9 दिसम्बर 1946 के संवैधानिक सभा में लीग ने भाग लेने से इंकार कर दिया। टकराव की स्थिति उत्पन्न हो गयी। तब लीग ने यह मांग की कि संवैधानिक सभा को भंग कर देना चाहिए। क्योंकि यह अप्रतिनिधिक है। 5 फरवरी 1947 को अंतरिम सरकार के कांग्रेसी सदस्यों ने वैवेल के पास एक पत्र भेजा जिसमें यह माँग की गयी कि लीग के नेताओं को इस्तीफा देने के लिए कहा जाए। इससे एक संकट की स्थिति उत्पन्न हो गयी।

## 36.3.4 अंग्रेज़ों के वापस लौटने की समय सीमा का निर्धारण

एटली ने 20 फ़रवरी 1947 को संसद में यह घोषणा की कि 30 जून 1948 तक अंग्रेज भारत छोड़ देंगे। एटली की इस घोषणा से संकटपूर्ण स्थिति थोड़ी देर के लिए टली। वैवेल के स्थान पर माउंटबेटेन भारत के वाइसरॉय बनाये गये। इस संवैधानिक संकट का यह कोई हल नहीं था पर एक बात स्पष्ट हो गयी कि अँग्रेज़ भारत छोड़ने के अपने निर्णय पर टिके हुए हैं। कांग्रेस ने एक बार फिर लीग से सहयोग की मांग की। नेहरू ने लियाक़त अली ख़ान से अनुरोध किया :

अंग्रेज़ अब हमारे देश से जा रहे हैं और इस निर्णय की ज़िम्मेदारी हम सब के कंधों पर समान रूप से पड़नी चाहिए। इसके लिए यह ज़रूरी है कि इस मामले पर विचार करने के लिए हम दूर-दूर रहकर बात न करें बल्कि आपस में विचार-विमर्श कर हल निकालें। लेकिन एटली की घोषणा की प्रतिक्रिया जिन्ना पर कुछ दूसरे ढंग से हुई। वे आश्वस्त थे कि अब उन्हें केवल पाकिस्तान की मांग पर अड़े रहने की ज़रूरत है। वस्तुतः उद्घोषणा से यह स्पष्ट था कि सत्ता का हस्तांतरण एक से अधिक प्राधिकारों के बीच होगा। ऐसा वातावरण इसलिए बन रहा था क्योंकि संवैधानिक सभा में मुस्लिम बहुल प्रांत शामिल नहीं हो रहे थे और यह संपूर्ण भारतीय जनता का प्रतिनिधित्व नहीं कर रही थी।

एटली के वक्तव्य के सम्बन्ध में पंजाब के गवर्नर की यह चेतावनी सही साबित हुई कि अब इसके परिणामस्वरूप व्यवस्था का बिखरना अवश्यम्भावी था और इस स्थिति में लोग अधिक से अधिक शक्ति अख्तियार करने की कोशिश करेंगे। उनकी चेतावनी सही सिद्ध हुई। लीग ने पंजाब में नागरिक अवज्ञा आन्दोलन शुरू किया जिसके कारण यूनियनिस्ट पार्टी के खिज्र हयात ख़ान के नेतृत्व वाली मिली-जुली सरकार समाप्त हो गयी। अतः जब माउंटबेटन भारत पहुँचे तब भारत की स्थिति पूरी तरह दुर्दमनीय थी। लीग युद्ध करने के लिए आमादा थी। और वह संप्रभु पाकिस्तान से कम कुछ भी स्वीकार करने को तैयार नहीं थी। कैबिनेट मिशन प्लान की प्रासंगिकता समाप्त हो चुकी थी। अतः इस पर विचार करने का कोई मतलब नहीं था। अब अंग्रेज़ों के सामने एक ही उपाय बचा था—देश की एकता को क़ायम करने के लिए सारा बल लगाना, क्योंकि लीग से और समझौता संभव नहीं था। कांग्रेस और लीग के बीच मध्यस्थता की नीति को छोड़ना अब ज़रूरी था। यह नीति अपनायी गयी कि जो एकता का विरोध करेंगे उन पर दबाव डाला जायेगा और जो एकता के पक्षधर होंगे उन्हें समर्थन मिलेगा। हालांकि कुछ वर्षों बाद एटली ने कहा था, ''हम संयुक्त भारत चाहते थे। हम अपने सम्पूर्ण प्रयत्नों के बाद ऐसा नहीं कर सकें।'' पर सच्चाई यह थी कि अंग्रेजों ने अस्पष्ट नीति अपनायी और दोनों पक्षों को समर्थन देकर अपनी स्थिति सुरक्षित रखनी चाही। इस तथ्य में पूरी सच्चाई है कि अराजकता की स्थिति को अंग्रेज़ों ने रोकने की कोशिश नहीं की। उन्होंने दंगों को रोकने के लिए बल प्रयोग नहीं किया, जबकि ऐसा करना समय की मांग थी।

## 36.3.5 तीन जून की योजना और इसका परिणाम

तीन जून 1947 की बैठक में भारत-पाकिस्तान के बँटवारे की बात तय हो गयी। इसमें तय किया गया कि भारत का विभाजन इस तरीके से किया जाय जिससे भारत की एकता सुरक्षित रहे। पाकिस्तान के निर्माण की बात मान कर लीग की अहम मांग पूरी की गयी थी, अतः कांग्रेस की भारत की एकता की मांग को अधिक से अधिक पूरा करने की कोशिश की गयी। मसलन माउंटबेटन ने कांग्रेस के इस प्रस्ताव का समर्थन किया कि भारतीय रजवाड़ों को स्वतंत्र रहने का विकल्प नहीं दिया जा सकता। माउंटबेटन यह महसूस कर रहे थे कि स्वतंत्रता के बाद भारत को कामनवेल्थ में रखने के लिए कांग्रेस को खुश रखना आवश्यक है। 3 जून योजना में यह निर्णय लिया गया कि 15 अगस्त 1947 को भारत और पाकिस्तान को सत्ता का हस्तान्तरण डॉमिनियन स्टेटस के आधार पर हो जायेगा।

कांग्रेस डॉमिनियन स्टेटस का दर्जा प्राप्त करने के लिए राज़ी थी क्योंकि इससे सत्ता का हस्तांतरण तुरन्त हो जाता और साम्प्रदायिक संकट से जूझने की शक्ति मिल जाती। साम्प्रदायिक विद्वेष और दंगों को रोकने में अंग्रेज़ अधिकारी बहुत उत्साहित नहीं थे। सरदार पटेल ने वाइसरॉय को दिये गये अपने इस वक्तव्य में स्थिति को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया। ''आप खुद शासन करना नहीं चाहते और न ही हमें शासन चलाने देना चाहते हैं। अंग्रेज़ उत्तरादायित्व छोड़ चुके थे। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह था कि उन्होंने भारत छोड़ने की तिथि घटाकर 15 अगस्त, 1947 कर दी।

जिस तेज़ी से देश का विभाजन हुआ वह भारतीय दृष्टिकोण से बड़ा ही दुखदायी था। अंग्रेज़ों को इससे फायदा हुआ क्योंकि बिगड़ती साम्प्रदायिक स्थिति के उत्तरदायित्व से उन्हें मुक्ति मिल गयी। सत्ता का हस्तान्तरण और देश का विभाजन दोनों ही जटिल प्रक्रियाएँ थीं

**21. भारत में मांउटबेटन का स्वागत करते हुए नेहरू (मार्च, 1947)**

और ये दोनों ही 3 जून से 15 अगस्त, 1947 के बीच के बहत्तर दिनों में सम्पन्न हुईं। कुछ अंग्रेज अधिकारी जैसे सेनाध्यक्ष और पंजाब के गवर्नर का यह मत था कि शांतिपूर्ण विभाजन के लिए कम से कम दो वर्षों का समय मिलना चाहिए। जिन्ना ने मामले को यह कहकर और बिगाड़ दिया कि वे भारत और पाकिस्तान के लिए सामान्य गवर्नर जनरल के रूप में माउंटबेटन को स्वीकार नहीं करेंगे। अब कोई ऐसी संस्था नहीं रह गयी थी जहाँ विभाजन से उठने वाली समस्याओं को रखा जा सके। यहाँ तक कि दिसम्बर 1947 में कश्मीर में युद्ध होने से संयुक्त रक्षा तंत्र भी टूट गया।

### विभाजन के दौरान कत्लेआम

विभाजन की तीव्रता और सीमा आयोग के निर्णयों में विलम्ब ने विभाजन की त्रासदी को और गंभीर बना दिया। ये माउंटबेटन के निर्णय थे। संकटपूर्ण स्थिति के उत्तरदायित्व से बचने के लिए माउंटबेटन ने सीमा आयोग का निर्णय सुनाने में विलम्ब किया। (जबकि यह 12 अगस्त, 1947 को तैयार हो गया था।) इसके कारण आम नागरिक और अधिकारी उलझन में पड़ गये। लाहौर और अमृतसर के बीच के गाँवों में रहने वाले लोग इस आशा में अपने निवास स्थानों पर टिके रहे कि वे सही सीमा के अन्तर्गत रह रहे हैं। देशान्तरण उन्मत्त मामला बन जाता है और अक्सर इसका परिणाम होता है कत्लेआम अधिकारीगण अपने स्थानांतरण के चक्कर में पड़े हुए थे और उन्हें कानून और व्यवस्था की कोई चिन्ता नहीं थी। लखार्ट (Lackhart) ने, जो 15 अगस्त से लेकर 3 दिसंबर 1947 तक भारतीय सेनाध्यक्ष थे, इस स्थिति का स्पष्ट ब्यौरा इन शब्दों में दिया ''अगर प्रशासनिक सेवा और सैन्य सेवा के अधिकारियों को विभाजन के पहले अपने देश भेज दिया जाता, तो अव्यवस्था को रोकने में ज़्यादा सफलता मिलती।''

22. लाखों बेघर हुए : विभाजन के दिनों का चित्र

**बोध प्रश्न 2**

निम्नलिखित कथनों को पढ़ें और सही ( ✓ ) या गलत ( x ) का निशान लगायें।

i) मुस्लिम लीग ने सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम को चुनाव का आधार बनाया था। ☐

ii) कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं के असहयोग के कारण अंतरिम सरकार सफल नहीं हो सकी। ☐

iii) जिन्ना की इच्छा थी कि मांउटबेटन भारत और पाकिस्तान के सामान्य गवर्नर जनरल बनें। ☐

iv) कैबिनेट मिशन प्लान के गुण दोषों का उल्लेख करें। (पाँच पंक्तियों में उत्तर दें)।

.......................................................................................................

.......................................................................................................

.......................................................................................................

.......................................................................................................

.......................................................................................................

## 36.4 कांग्रेस और विभाजन

सवाल यह पैदा होता है कि कांग्रेस ने विभाजन क्यों स्वीकार किया। लीग और अंग्रेज़ों की सहमति की बात तो समझ में आती है. पर कांग्रेस ने, जो इतने दिनों में भारत की एकता के लिए संघर्ष कर रही थी, अपना प्रयत्न क्यों छोड़ दिया? एक मत यह है कि सत्ता प्राप्ति के लोभ के कारण कांग्रेसी नेताओं ने विभाजन स्वीकार कर लिया। लेकिन यह मत सही नहीं है। भारत का विभाजन किसी नेता की व्यक्तिगत असफलता का परिणाम नहीं था, बल्कि सम्पूर्ण संगठन की बुनियादी असफलता का फल था।

कांग्रेस को अंततः विभाजन स्वीकार करना पड़ा क्योंकि वे मुस्लिम जन समुदाय को राष्ट्रीय मुख्यधारा में शामिल नहीं कर पाये और 1937 के बाद मुस्लिम सम्प्रदाय के बढ़ते चरण को रोक भी नहीं पाये। 1946 तक कांग्रेसी नेताओं के सामने यह स्पष्ट हो गया कि मुसलमान लीग के साथ हैं क्योंकि चुनाव में 80% मुस्लिम आरक्षित सीटों पर लीग की विजय हुई थी। एक साल बाद विभाजन अवश्यमभावी हो गया जब पाकिस्तान का मामला मत पेटी तक सीमित न रहकर सड़कों पर आ गया। साम्प्रदायिक दंगों से सारा देश आक्रांत हो उठा और अन्ततः कांग्रेसी नेताओं ने यह महसूस किया कि गृह युद्ध होने से अच्छा है कि भारत का विभाजन हो जाय।

अंतरिम सरकार की असफलता इस बात का स्पष्ट संकेत थी कि पाकिस्तान बनने की प्रक्रिया को अब कोई रोक नहीं सकता। नेहरू जी ने टिप्पणी की कि अंतरिम सरकार संघर्ष का क्षेत्र थी और सरदार पटेल ने 14 जून 1947 की अखिल भारतीय कांग्रेस की बैठक में दिये गये अपने भाषण में कहा कि पाकिस्तान वास्तव में पंजाब और बंगाल में ही क्रियारत नहीं हैं बल्कि उसके अंकुर अंतरिम सरकार में भी निहित हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि अंतरिम सरकार को प्रांतों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं था। (जबकि बंगाल में लीग का मंत्रिमंडल था। कलकत्ता और नोआखाली में दंगे हुए। इन दंगों में लीग मंत्रिमंडल न केवल निष्क्रिय रहा बल्कि उसके मामले को और गंभीर बना दिया) नेहरू जी ने महसूस किया कि जब गलियों में हत्याएँ हो रही हों और व्यक्तिगत एवं सामूहिक स्तर पर क्रूरता का वातावरण छाया हुआ हो तब पद पर बने रहने का कोई मतलब नहीं होता है। सत्ता के शीघ्र हस्तांतरण से एक ऐसी सरकार के हाथ में शक्ति आयेगी जो अपना उत्तरदायित्व समझ सकें।

विभाजन को स्वीकार करने के पीछे एक कारण यह भी था कि कांग्रेस यह नहीं चाहती थी कि देश टुकड़ों में विभक्त हो जाय। कांग्रेस ने वाइसरॉय और अंग्रेज़ सरकार की इस नीति

का समर्थन किया था कि भारतीय रजवाड़ों को स्वतंत्र रहने का विकल्प नहीं दिया जाय। अनुरोध या बल प्रयोग द्वारा उन्हें भारत या पाकिस्तान की यूनियन में शामिल कर लिया जाय।

**गांधी जी और विभाजन**

यह सभी लोग मानते हैं कि भारत के विभाजन के समय गांधी जी इतने निराश हो गये थे कि उन्होंने 125 वर्ष तक ज़िन्दा रहने की इच्छा भी त्याग दी थी। एक आम धारणा यह भी थी कि सत्ता के लोभ में गांधी जी के शिष्यों नेहरू और पटेल ने उनकी सलाह की अवहेलना की थी। गांधी जी पर इस विश्वासघात का प्रतिकूल असर पड़ा। लेकिन सार्वजनिक रूप से वे (गांधी जी) अपने शिष्यों की आलोचना नहीं करना चाहते थे।

गांधी जी के शब्दों में, उनकी लाचारी का मुख्य कारण यह था कि जनता पूर्णरूप से साम्प्रदायिक हो गयी थी, मुसलमान हिन्दुओं पर संदेह करने लगे थे तथा हिन्दू और सिक्ख भी यह विश्वास करने लगे थे कि अब परस्पर सह अस्तित्व संभव नहीं था। हिन्दुओं और सिखों की विभाजन की इच्छा के कारण गांधी जी एक ऐसे जन नेता रह गये थे जिन्हें एकता के लिए किए जा रहे संघर्ष में जनता का समर्थन प्राप्त नहीं था। मुसलमानों ने उन्हें अपना दुश्मन घोषित कर रखा था। जब अधिकांश जनता विभाजन चाहती थी, तब उसे स्वीकार करने के अतिरिक्त गांधी जी के पास कोई चारा नहीं था। 4 जून, 1947 की प्रार्थना सभा में गांधी जी ने कहा था "आपकी मांगों की पूर्ति हुई क्योंकि आपने इसकी इच्छा व्यक्त की थी। कांग्रेस ने कभी विभाजन की मांग नहीं की, लेकिन कांग्रेस जनता की नब्ज को पहचान सकती है। इसने महसूस किया कि हिन्दू और ख़ालसा भी ऐसा चाहते हैं।

समाजवादियों और गांधीवादियों ने गांधी जी से यह अपील की कि कांग्रेसी नेताओं को नज़रअंदाज़ कर एकता के लिए संघर्ष की शुरुआत की जाय। गांधी जी ने स्पष्ट किया कि समस्या यह नहीं है कि अंग्रेज़ी नेताओं को छोड़कर वे आगे बढ़ने में हिचक रहे हैं। गांधी जी ने 1942 में कुछ कांग्रेसियों की असहमति के बावजूद भारत छोड़ो आंदोलन शुरू किया था। उस समय उनका फैसला सही साबित हुआ। गांधी जी ने उपयुक्त माहौल देखकर ही इस आंदोलन का आह्वान किया था। 1947 में खास समस्या यह थी प्रभावकारी शक्तियाँ लुप्त हो गयी थीं जिनके आधार पर कोई कार्यक्रम बनाया जा सकता था। उन्होंने स्वीकार किया "आज मैं अनुकूल परिस्थितियों को दूर-दूर तक नहीं देख पा रहा हूँ। अतः मुझे उस समय का इन्तज़ार करना पड़ेगा।"

पर यह समय कभी नहीं आया। राजनीतिक गतिविधियाँ तेज़ी से करवट ले रही थीं। 3 जून को विभाजन की घोषणा हुई और 15 अगस्त 1947 को भारत का विभाजन हो गया। 14 जून 1947 के अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की घोषणा में गांधी जी ने कांग्रेसियों को सलाह दी कि वर्तमान समय की माँग को देखते विभाजन को स्वीकार कर लेना चाहिए, लेकिन इसे हृदय से स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए और जब स्थिति सुधर जाय तब फिर से भारत को एक करने की कोशिश करनी चाहिए।

## 36.5 साम्प्रदायिक समस्या के प्रति कांग्रेस का रवैया

कई बार ऐसा कहा जाता है कि यदि कांग्रेस जिन्ना से समझौता कर लेती तो विभाजन को रोका जा सकता था। यह समझौता 1940 में भी हो सकता था जब जिन्ना ने पृथक राज्य की मांग की थी। 1942 में क्रिप्स मिशन भारत आया और 1946 में कैबिनेट मिशन प्लान आया। दोनों ही अवसरों पर जिन्ना से समझौता किया जा सकता था। मौलाना आज़ाद ने अपनी आत्मकथा "इण्डिया विन्स फ्रीडम" में इस पक्ष का समर्थन किया है। यह मत इस तथ्य की उपेक्षा करता है कि जिन्ना ने जो माँग की थी, वह कांग्रेस के लिए स्वीकार करना असंभव था। जिन्ना ने माँग की थी कि कांग्रेस से तभी समझौता हो सकता है जब कांग्रेस अपने को हिन्दू निकाय और लीग को मुस्लिम के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार कर ले। इस मांग को स्वीकार कर लेने के बाद कांग्रेस का धर्मनिरपेक्ष ढाँचा नष्ट हो जाता। यह न केवल उन राष्ट्रवादी मुसलमानों के साथ विश्वासघात होता जो अपनी व्यक्तिगत हानि की

परवाह न करते हुए कांग्रेस के साथ थे, साथ ही भारतीय जनता और उनके भविष्य के साथ भी खिलवाड़ होता। जिन्ना की माँग स्वीकार करने पर भारत एक फासिस्ट हिन्दू राज्य ही बन पाता। राजेन्द्र प्रसाद के शब्दों में कांग्रेस "अपने अतीत को नकारकर, अपने इतिहास को झुठलाकर और अपने भविष्य के साथ छल करके ही ऐसा कर सकती थी।"

## 36.5.1 समझौते की नीति

कांग्रेस ने इन शर्तों पर जिन्ना से समझौता करने से इन्कार तो कर लिया पर जिन्ना के दुराग्रह के बावजूद कांग्रेस ने मुसलमानों को रियायत देने की एकतरफा घोषणा की। कांग्रेस ने 1942 में क्रिप्स मिशन के साथ किये गये समझौते में मुस्लिम बहुल प्रांत की स्वायत्तता देने की बात मान ली। 1944 में गांधी जी ने जिन्ना से बात की और इस बात को स्वीकार किया कि मुस्लिम बहुल प्रांतों को आत्म निर्णय का अधिकार मिलना चाहिए। जब कैबिनेट मिशन प्लान ने यह प्रस्ताव रखा कि अगर मुस्लिम चाहें तो मुस्लिम बहुल प्रांतों (समूह ख और ग) के लिए अलग संविधान सभा का गठन किया जायेगा, तब कांग्रेस ने इसका विरोध नहीं किया। कांग्रेस ने अनिवार्य समूहीकरण का विरोध किया, (क्योंकि इसके ज़रिए उत्तर-पश्चिमी सीमान्त प्रदेशों और आसाम को उन समूहों में शामिल होने के लिए बाध्य किया जा सकता था जिनमें शामिल होने की उनकी इच्छा नहीं हो सकती थी।) लेकिन 1946 के अंत में नेहरू जी ने घोषणा की कि उनकी पार्टी संघ न्यायालय के निर्णय को स्वीकार करेगी कि समूहीकरण अनिवार्य होना चाहिए या वैकल्पिक। इसलिए जब ब्रिटिश कैबिनेट ने 6 दिसंबर 1946 के अपने वक्तव्य में यह स्पष्ट किया कि समूहीकरण अनिवार्य होगा तो कांग्रेस ने उसे चुपचाप मान लिया। जैसा कि हमने पहले बताया है कि जब ब्रिटेन की सरकार ने 20 फ़रवरी 1947 को भारत छोड़ने की घोषणा कर दी, तब नेहरू ने लियाक़त अली ख़ान से सहयोग की अपील की। अतः जब कांग्रेस ने 3 जून की योजना और विभाजन को स्वीकार किया तो यह लीग की माँग के सामने अंतिम समर्पण था। वस्तुतः मुस्लिम बहुल राज्य संबंधी लीग की लगातार माँग के कारण ही भारत को कटु यथार्थ से गुज़रना पड़ा और कांग्रेस ने इस कटु यथार्थ को स्वीकार किया।

इस प्रकार रियायत की नीति को जिसके सहारे मुसलमानों को यह आश्वासन दिया जाता रहा कि उनके हित सुरक्षित रहेंगे, साम्प्रदायिक माँगों के सामने झुकना पड़ा। उदाहरण के लिए कांग्रेस ने अलगाव की नीति को, मुसलमानों की नीति को मुसलमानों का भय समाप्त करने के लिए स्वीकार कर लिया। कांग्रेस को यह आशा थी कि मुसलमान इस अधिकार का उपयोग नहीं करेंगे। यह एक सद्भावना पूर्ण विचार था, जबकि 1940 तक आते-आते मुस्लिम साम्प्रदायिकता का आधार अल्पसंख्यकों का डर नहीं रह गया था बल्कि उसका एक ही उद्देश्य था—एक स्वतंत्र संप्रभु मुस्लिम राष्ट्र की स्थापना। परिणामस्वरूप कांग्रेस हर बार रियायतें देती रही और यह देख कर कि कांग्रेस नरम पड़ रही है, जिन्ना अपनी मांगों को बढ़ाते गये। इन रियायतों से साम्प्रदायिकता की जड़ें कमज़ोर नहीं हुईं बल्कि इससे जिन्ना और लीग की शक्ति और मज़बूत हुई और उनकी इस क़ामयाबी को देखते हुए ज़्यादा से ज़्यादा मुसलमान उनके साथ आ गये। मुस्लिम साम्प्रदायिकता के साथ हिन्दू साम्प्रदायिकता भी तेज़ी के साथ उभरी। हिन्दू साम्प्रदायवादियों ने अपने को हिन्दुओं के हितों का एकमात्र संरक्षक प्रदर्शित किया और कांग्रेस पर आरोप लगाया गया कि मुसलमानों को अपने पक्ष में करने के लिए वह हिन्दुओं का अहित कर रही है।

## 36.5.2 बुनियादी असफलता

कांग्रेस साम्प्रदायिकता के बढ़ते चरण को रोक नहीं पायी। इसका सबसे बड़ा कारण यह था कि 1940 में साम्प्रदायिकता का जो चरित्र था उसे कांग्रेस समझ नहीं पायी। हालाँकि कांग्रेस धर्मनिरपेक्षता के प्रति प्रतिबद्ध थी और गांधी जी ने हिन्दू मुस्लिम एकता के लिए अपनी जान दे दी लेकिन बुनियादी कमज़ोरी यह थी कि राजनीति और विचारधारा के स्तर पर साम्प्रदायिकता से लड़ने की दूरगामी योजना सामने नहीं आ सकी। कांग्रेसी नेता यह विश्वास करते थे कि रियायतें देने और समझौता करने से साम्प्रदायिक समस्या हल हो जायेगी। प्रो. विपिन चन्द्र के अनुसार साम्प्रदायिकता मूलतः एक विचारधारा है जिसे कभी भी स्वीकार नहीं करना चाहिए और न ही किया जा सकता है। इसके साथ संघर्ष करना चाहिए और इसका विरोध करना चाहिए......कांग्रेस और राष्ट्रीय आंदोलन की सबसे बड़ी कमज़ोरी यह थी कि वह ऐसा नहीं कर सकी। "(इंडियाज़ स्ट्रगल फॉर इंडिपेंन्डेंस)।

23 मौलाना आजाद

**बोध प्रश्न 3**

1 निम्नलिखित प्रश्नों को पढ़कर सही (✓) और गलत (×) का निशान लगायें।

i) सत्ता के लोभ में कांग्रेस ने विभाजन स्वीकार किया। ☐

ii) अंग्रेज़ सरकार ने अपनी पिछली नीतियों के तहत विभाजन को स्वीकार किया। ☐

iii) पाकिस्तान के निर्माण में कांग्रेस की रियायत और समझौते की नीति बहुत बड़ा कारण थी। ☐

iv) कांग्रेस की वास्तविक असफलता का कारण यह था कि वह साम्प्रदायिकता से लड़ने के लिए लम्बी अवधि की योजना नहीं बना सकी। ☐

2 भारत के विभाजन के सन्दर्भ में गांधी जी ने अपने को असहाय क्यों पाया? पांच पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

## 36.6 सारांश

भारत का विभाजन मुस्लिम लीग की पाकिस्तान की माँग को लेकर हुआ। पृथक राष्ट्र की

-ीग 1940 के बाद तेज़ी से उभरी। जिन्ना के नेतृत्व में लीग ने संवैधानिक तरीकों से और प्रत्यक्ष कार्रवाई करके राजनीतिक गतिरोध की ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी जिससे विभाजन अवश्यमभावी हो गया। लेकिन पाकिस्तान के निर्माण में अंग्रेज़ों का बहुत बड़ा हाथ था। अंग्रेज़ शासकों ने बढ़ते हुए राष्ट्रीय आंदोलन में गतिरोध उत्पन्न करने के लिए साम्प्रदायिक शक्तियों का इस्तेमाल किया। लीग को मुसलमानों की एक मात्र प्रतिनिधि संस्था के रूप में स्वीकार किया और उसे वीटो की शक्ति दी। अंत में जब अंग्रेज़ों की नज़र में अखंड भारत सुविधाजनक प्रतीत होने लगा, तब उन्होंने इसे एक रखने का थोड़ा प्रयत्न किया, पर जिन्ना की कारगर धमकियों के सामने उनकी एक न चली। साम्प्रदायिक दंगों को अधिकारीगण रोक नहीं पाये और विभाजन अवश्यमभावी हो गया। कांग्रेस अपनी सम्पूर्ण प्रतिबद्धता के बावजूद भारत की अखंडता की रक्षा नहीं कर सकी। इसके दो कारण थे। यह राष्ट्रीय आन्दोलन में मुस्लिम जनता को शामिल करने में असफल रही और साम्प्रदायिकता से लड़ने की सही नीति नहीं अपना सकी।

24. शरणार्थियों को नेहरू की सांत्वना

## 36.7 शब्दावली

**फूट डालो और शासन करो** : अंग्रेज़ों की शासन करने की नीति, जिसके तहत भारतीय समाज को विभाजित करने की कोशिश की जाती थी।

**स्थानीय विकल्प धारा** : यह क्रिप्स प्रस्ताव की एक धारा थी, जिसके अनुसार भारतीय डॉमिनियन का कोई हिस्सा इसमें शामिल होने से इंकार करने के लिए स्वतंत्र था। इसके कारण पाकिस्तान की माँग को काफी वैधानिक बल मिला।

## 36.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

**बोध प्रश्न 1**

आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें शामिल होनी चाहिए–

1 i) 1937 के चुनाव में लीग का प्रदर्शन

ii) इसके आधार के प्रसार की ज़रूरत

iii) मुसलमानों को आकर्षित करने के लिए धार्मिक नारों का उपयोग कर उन्हें हिन्दुओं के विरुद्ध करना।

iv) मुसलमानों के लिए पृथक राष्ट्र की माँग को बार-बार दुहराना देखिए उपभाग 36.2.1

2 i) ✓ ii) ✓ iii) ×

**बोध प्रश्न 2**

1 i) × ii) × iii) ×

2 इसका सकारात्मक पक्ष यह था कि इसने भारतीय अखंडता के सिद्धांत को स्वीकार किया। इसका दोष यह था कि प्रांतों का समूहीकरण अनिवार्य है या वैकल्पिक, इसके संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं किया था। देखिए उपभाग 36.3.2

**बोध प्रश्न 3**

1 i) × ii)✓ iii)✓ iv)✓

2 गांधी जी असहाय इसलिए थे क्योंकि i) जनता में साम्प्रदायिकता तेज़ी से फैलती जा रही थी। ii) अब वे अखंडता के प्रयास में जनता को साथ लेकर नहीं चल सकते थे iii) मुसलमानों, हिन्दुओं और सिक्खों के विभाजन को अन्ततः स्वीकार कर लिया था।